सांख्याभिमत प्रमाण

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

किसी भी विषय का असन्दिग्ध ज्ञान या अनुभव प्रमाण या यथार्थ ज्ञान है। प्रमा की उत्पत्ति का आधार ये तीन तथ्य हैं-प्रमाता, प्रमेय और प्रमाण। प्रमाता विषय का ज्ञाता होता है। प्रमेय विषय है। प्रमाण ज्ञान के साधन को कहा जाता है। प्रमाण के बिना हमें प्रमेय का ज्ञान नहीं हो सकता है, अतः प्रमेयसिद्धि के लिए प्रमाण की आवश्यकता होती है-

तस्मान्न बध्यते नापि मुच्यते नाऽपि संसरति कश्चित्।

कहने का तात्पर्य यह है कि प्रमाण वह चित्तवृत्ति है जिसका विषय निश्चित रूप से ज्ञात हो रहा हो, जो बाधित होने वाला न हो तथा पूर्व से ज्ञात न रहा हो। अतः प्रमाण के द्वारा यथार्थ ज्ञान किया जाता है।

प्रमाण सर्वथा अभिनव ज्ञानोत्पादक है। प्रमाण से ही हमें किसी विषय का ज्ञान प्राप्त होता है-

प्रमेयसिद्धिः प्रमाणाद्धि।

सांख्य दर्शन में प्रमाण की संख्या तीन बताई गई है- प्रत्यक्ष प्रमाण, अनुमान प्रमाण तथा शब्द प्रमाण-

दृष्टमनुमानमाप्तवचनं च सर्वप्रमाणसिद्धत्वात्।

त्रिविधं प्रमाणमिष्टं.....।।

अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द ये तीन ही प्रमाण हैं क्योंकि अन्य सब प्रमाणों का इनमें अन्तर्भाव है। अतएव सांख्य को तीन प्रमाण ही इष्ट हैं।

सांख्यककारिका में प्रत्यक्ष, अनुमान एवं शब्द प्रमाणों के द्वारा पच्चीस तत्त्वों की सिद्धि की गई है।

प्रत्यक्षप्रमाण-

प्रत्यक्षप्रमाण को स्पष्ट करते हुए सांख्यकारिका में कहा गया है-प्रतिविषयाध्यवसायो दृष्टम्। अर्थात् इन्द्रियों का विषयों के साथ साक्षात् सम्बन्ध या सन्निकर्ष होने पर जो अध्यवसाय अर्थात् निश्चयात्मक ज्ञानरूप बुद्धि व्यापार होता है वह प्रत्यक्षप्रमाण है। विषय सन्निकर्ष इन्द्रियों का होता है। वस्तुतः श्रोत्रादि प्रत्येक इन्द्रिय का, शब्दादि प्रत्येक स्व-स्व विषय का जो अध्यवसाय (निश्चय) है, वह प्रत्यक्ष है। विषयी (बुद्धि) को अपने आकार से रंगकर तद्रूप बना देने वाले विषय कहलाते हैं। पृथिवी आदि और सुख-दुःखादि विषय हैं। विषय से सम्बद्ध इन्द्रिय प्रतिविषय है। अध्यवसाय बुद्धि का व्यापार कहा जाता है। इस प्रकार इन्द्रियों द्वारा सम्पर्क में आये हुए शब्दादि विषयों का ज्ञान प्रत्यक्षप्रमाण है।

अनुमान प्रमाण-

सांख्यकारिकाकार ने अनुमान प्रमाण का लक्षण प्रस्तुत करते हुए कहा है-तल्लिङ्गलिङ्गिपूर्वकम्। यहाँ पर लिङ्ग का अभिप्राय व्याप्य तथा लिङ्गि का अभिप्राय व्यापक है। जैसे-धूमादिर्व्याप्यो वह्न्यादिः व्यापकः। इस प्रकार अनुमान का विशिष्टलक्षण होगा-व्याप्यव्यापकपक्षधर्मताज्ञानपूर्वकम् अनुमानम्। अर्थात् व्याप्य-व्यापक पक्षधर्मता ज्ञानपूर्वक अनुमान होता है।

लिंग-लिंगी या व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध दो प्रकार का होता है- क) समव्याप्ति तथा ख) विषमव्याप्ति।जहां हेतु और साध्य में नियम साहचर्य रूप स्वाभाविक सम्बन्ध हो, जिसे अन्वय और व्यतिरेक के द्वारा समान रूप से बताया जा सके, वहां उस व्याप्ति को समव्याप्ति कहा जाएगा। जैसे वृक्ष के पत्तों को हिलते देखकर वायु के प्रवाहित होने का अनुमान किया जा सकता है और पत्तों के न हिलने से वायु का प्रवाह न होने का अनुमान भी किया जा सकता है। लेकिन ऐसे भी उदाहरण बताये जा सकते हैं जहां ऐसा नहीं होता। धूम को देखकर अग्नि के होने का तो अनुमान किया जा सकता है तथापि अग्नि को देखकर धूम के होने का अनुमान नहीं किया जा सकता। गीली लकड़ी में आग लगने पर धुआं दिखाई देगा अन्यथा नहीं। इस प्रकार की व्याप्ति विषम व्याप्ति कही जाएगी।

अनुमान में प्रत्यक्ष तो सदा निहित आधार होता है। अनुमान काल में तो प्रत्यक्ष आधार बनता ही है। साथ ही पूर्व में प्रत्यक्षीकृत ज्ञान की स्मृति भी अनुमान में होती है। अत: अनुमान को व्याप्तिज्ञानस्मरणपूर्वक व्याप्य से व्यापक का ज्ञान कहा जा सकता है।

सांख्यकारिका में 'त्रिविधमनुमानमाख्यातम्' के रूप में अनुमान के तीन भेद माने गए हैं,किन्तु नामतः उनका उल्लेख नहीं किया गया है। इनके स्वरूप का भी परिचय नहीं दिया गया है। न्यायसूत्र में अनुमान अनुमान के 'अथ तत्पूर्वकं विविधमनुमानं पूर्ववच्छेषवत् सामान्योदृष्ट च' के रूप में ये तीन भेद माने गए हैं। बहुत सम्भव है कि सांख्यकारिका में भी इन्हीं तीन भेदों की ओर संकेत किया गया हो। यह अनुमान-1.शेषवत्, 2. पूर्ववत् तथा 3. सामान्योदृष्ट के भेद से तीन प्रकार का होता है-त्रिविधम् अनुमानम् आख्यातम्।

शिष्यते परिशिष्यते इति शेषः, स एव विषयतया यस्यास्त्यनुमानज्ञानस्य तच्छेषवत्। अर्थात्- जो बच जाए वह शेष है। वह शेष ही जिस अनुमान ज्ञान का विषय हो, वह शेषवदनुमान होता है। जैसे 'शब्द' गुण होने से मन, काल, दिक् में नहीं रह सकता। श्रौत्रग्राह्य होने से पृथिवी, जल, तेज, वायु तथा आत्मा का विशेष गुण भी नहीं हो सकता। अतः शेष बचे हुए द्रव्य 'आकाश' का ही गुण होगा। ध्यातव्य है कि यह केवल व्यतिरेकी होता है। शेषवत् अनुमान में किसी समूह या विस्तृत विषय के अंश के प्रत्यक्ष के आधार पर शेष का अनुमान किया जाता है। कार्य को देखकर कारण के अनुमान को भी शेषवत् कहते हैं। समुद्र के एक बूंद जल को चखकर सारे समुद्र के जल के खारेपन का अनुमान शेषवत् अनुमान का रूप है। नदी में जल के आधिक्य तथा वेग को देखकर 'कहीं वृष्टि हुई होगी' ऐसे अनुमान को 'शेषवत्' कहते हैं।

'पूर्वं प्रसिद्धं दृष्टस्वलकक्षणसामान्यम् इति यावत्' अर्थात् किसी वस्तु का सामान्यरूप, जिसके विशिष्टरूप का पहले प्रत्यक्ष किया जा चुका हो। जैसे धूम के द्वारा वह्नित्व इस सामान्य धर्म से युक्त पर्वतस्थ वह्निविशेष का अनुमान किया जाता है। यहाँ वह्नित्व सामान्य का स्वलक्षण 'वह्निविशेष' रसोईघर

में पहले ही देखा जा चुका है। मेघ को जल से भरा हुआ देखकर 'वृष्टि होगी' ऐसा कोई अनुमान करे तो उसे पूर्ववत् अनुमान कहेंगे।

सामान्यतोदृष्टस्वलक्षणसामान्यविषयम्। यथेन्द्रियविषयकमनुमानम्। अर्थात् इस अनुमान का विषय वे सामान्य वस्तुएं होती हैं जिनका स्वलक्षण विशेषरूप से पहले से देखा हुआ नहीं होता है। जैसे इन्द्रियातीत पदार्थों में किया जाने वाला अनुमान सामान्यतोदृष्ट अनुमान है। सामान्यतोदृष्ट अनुमान से प्रकृति और पुरुष की सिद्धि हो जाती है। क्रिया होने से इनका कारण भी होगा-इस प्रकार इन्द्रियों का ज्ञान होना सामान्यतोदृष्ट अनुमान है।विज्ञानभिक्षु के अनुसार 'अप्रत्यक्षजातीय पदार्थ का अनुमान सामान्यतोदृष्ट अनुमान है। प्रत्येक कार्य स्वसजातीयकारण से उत्पन्न होता है। 'शक्तस्य शक्यकारणात्' में यही भाव है। यह सत्कार्यवादी मान्यता है जिसके अनुसार कार्य-कारण गुणात्मक होता है। अत: कार्य को देखकर कारण त्रिगुणात्मक (सुख-दु:ख-मोहात्मक) होता है। अत: इनका कारण रूप अव्यक्त भी ऐसा ही होगा। इस तरह प्रकृति की त्रिगुणात्मकता का अनुमान होता है। इसी तरह संघात की परार्थता (चेतनार्थता) देखकर चेतन का भी अनुमान होता है।

शब्द प्रमाण

आप्तोपदेश: शब्द:। आप्त व्यक्ति के उपदेश वचन को शब्द प्रमाण कहा जाता है। विज्ञान भिक्षु 'आप्ति' को योग्यता के अर्थ में स्वीकार करते हैं। ईश्वरकृष्ण ने 'आप्तश्रुतिराप्तवचनम्' के रूप में शब्द प्रमाण को स्पष्ट करते हैं। यहाँ श्रुति को वाचस्पति मिश्र 'वाक्यजनितं वाक्यार्थज्ञानम्' कहते हैं और इसे (श्रुति प्रमाण को) स्वत: प्रमाण कहते हैं। न केवल सकल दोषाशंका रहित होने से अपौरुषेय वेद वाक्य जनित ज्ञान स्वत: प्रमाण होता है अपितु वेदमूलक स्मृति, इतिहास पुराणादि के वाक्य भी शब्द प्रमाण होते हैं। शब्द प्रमाण की यह स्वत: प्रमाणता शब्द की अपना ज्ञान कराने की शक्ति के कारण हैं।

सांख्य दर्शन में तीन की प्रमाण माने गए हैं, क्योंकि समस्त प्रमेयों का ज्ञान इन तीन प्रमाणों से हो जाता है। अन्य कथित प्रमाणों का भी अन्तर्भाव इन्हीं के अन्तर्गत हो जाता है।